भूमिका

1980 के बाद विश्व परिदृश्य में तेजी से बदलाव हुए। राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक परिवर्तनों के साथ - साथ सांस्कृतिक तथा साहित्यिक परिवर्तन हुए। विकास तथा आधुनिकता का हवाला देकर आमजन को हाशिए पर धकेला जाने लगा। भूमण्डलीकरण, उदारीकरण, निजीकरण के चलते उपभोक्तावादी संस्कृति का विकास हुआ। स्त्री का वस्तुकरण हुआ, दलित पर हमले बढ़े। आदिवासियों के जल, जंगल, जमीन पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का पंजा चलने लगा, किसानों की जमीनें छीनकर उन्हें बेदखल होने पर मजबूर किया गया। बाजार के बढ़ते प्रभाव ने उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म दिया, जिसने मनुष्य को मशीन में तब्दील कर दिया। विकास की भूखी दौड़ में पर्यावरण का अत्यधिक ह्रास किया गया। धर्म तथा राष्ट्रवाद की आड़ में साम्प्रदायिकता का विस्तार हुआ। ये सभी मुद्दे विमर्श के केंद्र में आए जिसने साहित्य को प्रभावित किया। अपने समय के साहित्य की नब्ज पहचानते हुए आलोचकों ने बेबाक तरीके से अपनी राय रखी। स्त्री, दलित, आदिवासी, किसान के पक्ष में खड़ी होकर आलोचना ने बाजारवाद तथा साम्प्रदायिकता का डटकर विरोध किया तो पर्यावरण ह्रास के प्रति चिंता जाहिर की।

रचनात्मक साहित्य पढ़ने में मेरी रुचि शुरु से ही रही। विश्वविद्यालय में दाखिले के बाद सक्रिय साहित्यकर्मियों, लेखकों - विचारकों के संपर्क से वैचारिक साहित्य में रुचि जगी। बचपन की आदतों (जिसमें हर चीज के बारे में जानना तथा बताना शामिल था) के कारण आलोचनात्मक साहित्य के प्रति रुझान बढ़ा। इसी कारण एम. फिल. का शोधकार्य हिंदी के प्रखर आलोचक 'डा. ओमप्रकाश ग्रेवाल की आलोचना - दृष्टि' पर किया। हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय में दाखिले के बाद आलोचना पर ही पीएच. डी. का शोधकार्य करने का मन बनाया, जिसका एक कारण समकालीन विमर्शों के बारे में जानना तथा उनको अपने शोध में शामिल करना रहा। डा. कमलानंद झा ने मेरी रुचि को ध्यान में रखते हुए 'हिंदी आलोचना का अध्ययन (1980 से 2010 तक)' विषय सुझाया।

शोध - प्रबंध को अध्ययन की दृष्टि से पांच अध्यायों में बांटा गया है। पहले अध्याय 'आलोचना की अवधारणा' में आलोचना के अर्थ, परिभाषा स्पष्ट करते हुए आलोचना प्रक्रिया को

समझा गया है, रचना तथा आलोचना का अंतःसंबंध तथा आपसी प्रभाव को विस्तार से व्यक्त किया गया है। आलोचना के लिए विचारधारा के महत्व तथा उसकी आवश्यकता पर विचार किया गया है। आलोचना के प्रमुख सिद्धांत एवं पद्धतियां जिनके आधार पर आलोचना होती है, का संक्षिप्त विवेचन किया गया है।

दूसरे अध्याय 'आलोचना परम्परा और प्रमुख हिंदी आलोचक' में आलोचना के उद्भव तथा विकास को समझने के लिए हिंदी के प्रमुख आलोचकों की कृतियों, साहित्य सिद्धांतों का विवेचन किया गया है।

तीसरे अध्याय 'आपातकालोत्तर आलोचनाः स्त्री, दलित एवं आदिवासी विमर्श' में 1980 के बाद उभरे विमर्शों स्त्री, दलित तथा आदिवासी के संकट तथा संघर्षों को समझा गया है। साहित्य और आलोचना में उनकी उपस्थिति को पहचानकर, प्रमुख मुद्दों पर चर्चा की गई है।

चौथे अध्याय 'आपातकालोत्तर आलोचनाः किसान, बाजारवाद, पर्यावरण एवं साम्प्रदायिकता संबंधी विमर्श' में नए उभरते विमर्शों किसान, बाजारवाद, पर्यावरण तथा साम्प्रदायिकता के संकटों तथा चिंता की साहित्य में उपस्थिति तथा उस पर आलोचना की भूमिका को रेखांकित किया गया है।

पांचवे अध्याय 'आपातकालोत्तर आलोचना की उपलब्धियां और सीमाएं' में 1980 के बाद हिंदी आलोचना में आए बदलावों को समझने की कोशिश की गई है। अंत में उपसंहार में शोध विषय का संक्षिप्त सार प्रस्तुत किया गया है।

शोध - प्रबंध की पूर्णता का श्रेय मैं अपने शोध - निर्देशक डा. सिद्धार्थ शंकर राय को देना चाहूंगी, जिन्होंने शोध सामग्री उपलब्ध करवाने, शंकाओं को दूर करने तथा स्वतंत्र शोध करने में मुझे पूर्ण सहयोग दिया। लगातार प्रेरणा देने और आत्मविश्वास जगाने में उनका योगदान अप्रतिम है।

विभाग के सहायक प्राध्यपकों डा. अरविंद तेजावत तथा डा. अमित मनोज का मैं आभार व्यक्त करती हूं, जिन्होंने हमेशा सकारात्मक ऊर्जा तथा शोध संबंधी सुझाव दिए।

मैं अपने मां - पापा एवं परिवारजनों की आभारी हूं जिन्होंने शोध - कार्य के दौरान मुझे सारी जिम्मेदारियों से मुक्त रखा। मैं अपने साथी मलखान सिंह तथा मित्रों की धन्यवादी हूं जिनसे हमेशा जीवंत सहयोग एवं उत्साह मिलता रहा।

(निर्मला)